श्रीरत्नप्रभाकरज्ञानपुष्पमाला पु० नं० ५०

श्री ज्ञानगुरुभ्यो नमः

दो विद्यार्थीयों का संवाद.

लेखक.—
मुनिश्री गुणसुन्दरजी महाराज.

प्रकाशक:—
श्रीरत्नप्रभाकरज्ञानपुष्पमाला.
मु० फलोदी–(मारवाड)

प्रथमावृत्ति १००० ओसवाल सं० ११८६
वीर सवत् २४५५

मूल्य =–२–०

द्रव्य सहायक,
श्रीसंघ-लुणावा (मारवाड)
ज्ञानखाता का चन्दा से

मुनिश्री ज्ञानसुन्दरजी गुणसुन्दरजी महाराज का
चातुर्मास लुणावा (मारवाड) में होनेसे जनता
में धर्मजागृति और उत्साह खूब बढ रहा है

श्री आनंद प्रिन्टींग प्रेस
भावनगर-शाह गुलाबचंद
लल्लुभाईने मुद्रित किया

मुनिश्री

गुणसुन्दरजी महाराज

जन्म वि स १९४६

स्वर्ग० दीक्षा वि स १९९१

जैन दीक्षा वि स १९६३

स्थान—

बीलाडा-(मारवाड)

आनंद प्रेस—भावनगर

हितशिक्षा.

मनुष्य जन्म की उत्तमता को समझो
देव गुरु धर्म पर पूर्ण श्रद्धा रक्खो
षट् कर्म प्रतिदिन करते रहो
सदैव कुच्छ न कुच्छ ज्ञान सिखा करो
स्वधर्मी भाइयों को यथाशक्ति सहायता करो
अपना आचार व्यवहार शुद्ध रक्खो
मातापिता को नमस्कार कर उन की आज्ञा का पालन करो। सेवा शुश्रुषा करो।
अपने बालबच्चों को सुसंस्कारी सदाचारी और वीर बनावों उन की पढाई पर सब से पहले लक्ष दो पढाई के समय उन का लाड मत करो
सदैव उद्योग करते रहो निकम्मे मत रहो
प्रतिदिन कुच्छ न कुच्छ सुकृत किया करो
अगर तुम चार पैसा पैदा करो तो दो पैसा निज खर्चामें एक पैसा ज्ञानमें एक पैसा जमा रक्खो।
विपत्ती के समय धैर्यता रक्खो।

सब के साथ मधुर वचन बोलो
व्यर्थ पाप कर्म या टंटा फिसाद मत करो
चलम—बीडी सिगरट वगैरह नशावाली चीज सेवन मत करो, पैसा और शरीर की बरबादी के सिवाय इस में कुच्छ भी लाभ नहीं है।
जुवा—पत्ता (तास) मत खेलो।
अपनी इज्जत हलकी हो वैसा कार्य मत करो।
किसी के साथ वैरभाव मत रक्खो
विश्वासघात धोखाबाजी का पाप जबर है इस का बदला परभवमें देना पड़ता है वास्ते त्यागो।
सुसंगत करो कुसंगतसे दूर रहो।
किसी का भी मर्म प्रकट मत करो
किसी भी कार्य के लिये हिम्मत मत हारो
अच्छा कार्य में हमेशां पुरुषार्थ करते रहो
किसीकी दुराशीष मत लो
महात्मा पुरुषों का आशिर्वाद प्राप्त कर अपना जीवन सुख और शान्ति में बीतावो। शुभम्।

प्रस्तावना।

कौन नहीं जानता कि देशका उत्थान करने में शिक्षा
चार की कितनी आवश्यक्ता है। इधर अर्द्ध शताद्विसे
शिक्षा का प्रचार हो रहा है उसके फल स्वरूप कई
र्यकर्त्ता समाज के समक्ष देश सुधारकी आकांक्षाएं
कर उपस्थित हुए हैं पर वे इतनी कम संख्या में हैं कि
रत की विशालता को देखते हुए वे नहीं के बराबर हैं।
शिक्षित समाजका अधिकतर कार्य देशके लिये लाभप्रद
हीं हुआ है।

शिक्षित हो कर भी देशप्रेमी न होना प्रकट करता है
के शिक्षा देनेके ढंग में कहीं न कहीं भारी भूल है। जो
रणाली इस समय विद्यमान है उससे शक्तियों का वि-
कास नहीं होता अतएव आवश्यक्ता है इस बातकी कि
देश की वर्तमान आवश्यक्ताओं को सामने रखकर ऐसी
शिक्षा संस्थाएँ स्थापित की जाय जिनमें शिक्षा प्राप्त कर
शिक्षित समुदाय देश के उत्थान में सहायक हों।

इसी बात को लक्ष्य में रखते हुए ही प्रस्तुत पुस्तक में दो छात्रों का चरित्र उपन्यास की तौर पर लिखा गया है आशा है कि पाठकों को यह रुचिकर प्रतीत होगा तथा राष्ट्र निर्माण के विचारों में यह उपन्यास अपना एक स्थान पावेगा। आशा करता हूं कि समालोचक महोदय अपनी अपनी सम्मति प्रकट कर इस विषय सम्बन्धी अपने विचार प्रकट कर।विचार।विनिमयद्वारा मुझे सहायता देंगे।

यह पुस्तक विद्यालयों के सचालकों शिक्षकों एवं छात्रा को भी अपने उद्देश्य को निभाणा करनमें कुछ सहायता अवश्य दगी इसी उद्देश्य से यह प्रयत्न किया गया है। यदि पाठकों को यह पुस्तक रुचिकर प्रतीत होगी तो मैं अपने परिश्रम को सफल समझुगा तथा इस विषय की ओर विशेष प्रगति करूँगा।

पार्श्वनाथ जैन विद्यालय पो वरकाणा। १०–५–१९२९	लेखक मुनि गुणसुन्दर।

ॐ

दो विद्यार्थियों का संवाद.

भारत भी विभूतियों का धाम है। एक से एक अनुपम चीज इस पर कहीं न कहीं मिल ही जाती है। इस पर सड़कों का तांता सा बिछ गया है। एक सड़क के किनारे प्रख्यात श्रीपुरनगर अपनी विशालता के कारण यात्रियों के मन को मोह रहा है। नगर भर में जनरव का कोलाहल साफ बता रहा है कि यह नगर व्यापार का केन्द्र है। रेल की सीटियाँ, मोटरों की भों भों और ट्रामों की घंटियों के मारे जान जोखों में रहने का भय इस नगर में बना ही रहता है।

व्यापार के साथ साथ लोगों की अभिरुचि धर्मकी ओर भी है इस बात का सबूत यह है कि जगह जगह बड़े बड़े भीमकाय विशाल गगन चुम्बी भव्य मन्दिर वायु में अपने नगर की यश की सूचना ध्वजा द्वारा दे रहे हैं। मन्दिरों पर रक्खे हुए सुवर्ण कलशों को देख कर सहसा यही भान होता है कि यहाँ के निवासियोंने मुक्ति को वश में करने के लिये विविध टोटके कर रक्खे हैं।

एक सज्जन अपने मित्रों को कह रहा है चलिये मित्र गण मेरे साथ और एक सैर कर लीजिए इस नगर की। इस नगर का कार्य सुव्यवस्थित है। बाजार चौड़े और गलियाँ साफ नजर आती हैं। सचमुच इस नगर के राजा वर-विक्रमसिंह–प्रजावत्सल धन्यवाद के पात्र हैं जिन्होंने अपने नगर की शोभा को प्रजा के सह-

योग से दूना बढ़ाया है। सब ओर से राजा की भूरी भूरि प्रशंसा सुनाई देती है। राजा एवम् प्रजा दोनों अपने काम में मस्त हैं। शहर में कामों का क्रम इस प्रकार से बंधा हुआ है कि षट्कर्मादि कार्योंमें दिन बीतते देर नहीं लगती।

सन्ध्या का समय है मंद मंद हवा चल कर ग्रीष्म ऋतु से संतप्त प्राणियों को सुख पहुँचा रही है। इसी नगर के पश्चिम की ओर एक रम्य बाग है। इस उद्यान का नाम 'शांति पुष्प निकेतन' है। यह बगीचा इतना हरा भरा है कि देखनेवालेका हृदय हर्षित हो जाता है। वैसे जल की भी खूब प्रचुरता है। जिधर आंख उठा कर देखिये जल ही जल बहता हुआ दिखाई देता है। छोटी छोटी अनेक नालियों में कूओं, वापियों और हौजों से निर्मल जल आ आ कर वृक्षों, पौधों और लता-

आँखों को विकसित करता है। आम, जामुन और दाड़िम के वृक्ष बहुत शोभायमान हैं। एक ओर नीम्बू, नागपुनाग, अशोक, सेव, अगूर आदि के वृक्षों की बड़ी कतार है। दूसरी ओर द्राक्ष, चम्पक वसत तथा नागरवेल की लतायें झुँड की झुँड में दिखाई देती हैं। यह स्थान पक्षियों के कलरव के अतिरिक्त और चहल पहल से परे साधु लोगों के ध्यान करने योग्य है। सांसारिक झंझट यहाँ से गायब हैं। इस पवित्र वातावरण में हृदय को शांति तथा चित्त को एकाग्रता मिल जाय इस में कोई आश्चर्य की बात नहीं है। समय असमय पर नगर के लोग भी यहाँ आकर दो घड़ी अपना दिल बहलाते हैं तथा यहाँ की पवित्र और सुगंधित वायु उनके स्वास्थ्य को भी सुधारती है।

ठीक बगीचे के पीछे कल कल आवाज

करती हुई एक क्षुद्र प्रवाहिणी नदी बह रही है, जिसके पानी में बगीचे के बड़े बड़े वृक्षों का प्रतिबिंब पानी को धूप से बचाता है। उसी नदी के एक किनारे पर एक पत्थर पर दो व्यक्ति कुछ बातें कर रहे हैं। एक का नाम विद्यानंद तथा दूसरे का अबोधचन्द्र है। दोनों इस वार्तालाप में इतने तल्लीन हैं कि उन्हें यह भी सुधि नहीं कि लौटने का समय कभी का बीत चुका है। चलते चलते उस स्थान ही का ज़िक्र चल निकला। विद्यानंदने उँगली से बाग की ओर संकेत करते हुए कहा, "कहो भाई यह कैसा उत्तम स्थान है ?"

अबोधचन्द्र-"कहना ही क्या बहुत ही सुन्दर और सुखद स्थान है।"

विद्यानंद-"यह स्थान वास्तव में तब ही सुखद हो सकता है जब कि कुछ ज्ञान इस

पवित्र वातावरण में रह कर विद्याध्ययन करें। मेरा विचार है कि मैं यहाँ पर एक विशाल विद्यालय का भवन बनवादूँ जिस में इस नगर के तथा अन्य स्थानों के विद्यार्थी आ आ कर यहीं रहें और विद्योपार्जन कर अपने देश का उत्थान करें। कहो इस में तुम्हारी क्या राय है ?"

प्रबोधचन्द्र—"यह आपने ठीक विचार किया कि हजारों रुपये इस जंगल की मिट्टीमें मिला देना। यदि आपको मकान बनवाना है तो शहर ही में बनवाइये। आपकी हवेली ब्याहशादी में काम आयगी और यह आपकी सम्पत्ति आपके संतान को सहायता भी देगी।

विद्यानंद—"अपने अपने बाल बच्चों की फिक्र तो सब करते हैं। यदि सार्वजनिक कामों में धन व्यय किया हो तो उसका फल कई

गुना अधिक मिलता है। मैं कई दिनों से इस बात का अनुभव कर रहा हूँ कि अपने नगर के पास में एक बड़ा छात्रावास हो जहाँ पर सुयोग्य विद्यार्थी शिक्षा पाकर अपना और अपने देश का सुधार करें।"

प्रबोधचन्द्र–"नहीं मालूम आपको देश सुधार की इतनी चिन्ता क्यों लगी है, न मालुम ये दूसरोंके पुत्र पढ़कर आपके किस काम आवेंगे ?"

विद्यानंद–"मित्र शायद तुम्हें यह मालूम नहीं है कि अपन लोग सदा स्वार्थ ही की बातें सोचा करते हैं। मेरा तो ऐसा विश्वास है कि परमार्थ जैसा और कोई कार्य दुनियाँ में करने योग्य ही नहीं है। ऐसे सार्वजनिक कार्यों से इस लोक और परलोक दोनों में लाभ ही लाभ है। ऐसा कौन दुर्भागी होगा जो द्रव्य प्राप्त कर के भी ऐसे परोपकारी कार्य में व्यय न करे।"

प्रबोधचन्द्र–"परोपकार के तो दूसरे काम भी बहुत हैं। इस जंगल में यह आफत खड़ी करना मुझ तो ठीक नहीं जचता है। बिचारे छात्र शहरसे दो मील दूर जंगल में आवेंगे। यहाँ रहकर जंगली बन जावेंगे और यदि शहर में आवेंगे जावेंगे तो समय का बहुत व्यर्थ खर्च होगा। मैं तो विद्यालय और छात्रावास यहाँ बनाना उचित नहीं समझता अगर आप की ऐसी ही इच्छा है तो नगर ही में क्यों नहीं बनवा लेते कि इस दौड़–धूप की आफत से सब बच जावें।"

विद्यानंद–" आप के इस कथन में कुछ सार नहीं पाया जाता है। कारण नगर की हलचल तो पाठशाला के कार्य में खूब बाधा पहुँचाती है। जब छात्र लोग दो मील चलकर आवेंगे तो उनका स्वास्थ्य भी ठीक रहेगा।

प्रातःकाल का घूमना बहुत लाभकारी है। वैद्य और डाक्टर लोग भी इसे लाभप्रद सिद्ध करते हैं। इस स्थान का जलवायु उनके स्वास्थ्य की रक्षा करेगा। वे शहरी झमटों से दूर रहेंगे तथा यहाँ ब्रह्मचर्य पालते हुए सदाचारी नागरिक बनकर ऊँची शिक्षा ग्रहणकर देश को लाभ पहुँचावेंगे। समझ गये आप ?"

अबोधचन्द्र—"भाईजी आप तो आकाश की बातें कर रहे हैं। क्या तो देश होता है क्या बन्धन है और क्या समाज। पासमें पैसा होगा तो सब कोई पूछेगा। मेरी इच्छा तो यह है कि आप यह काम स्थगित रक्खें। फिर आपकी मरजी।"

विधानन्द—"अबोधचन्द्र, क्या कह रहे हो ? जरा भविष्य का भी विचार किया करो। मैं तो ऐसे लोकोपकारी कार्य में अवश्य कुछ

खर्च करूगा। पर आप इस पवित्र कार्य में क्या कुछ सहायता देंगे ? यह फरमावें "

अघोषचन्द्र-" बिल्कुल नहीं, सहायता तो दूर रही पर मैं आपके पास तक नहीं आऊँगा। ऐसा कौन पागल है जो बिना मतलब के कामों में रुपया बरबाद कर दे। भाई! मेरा कहा मानलो तब तो ठीक है अन्यथा मुझे आपके पास आना बंद करना पड़ेगा।"

विद्यानंदने सिरपर हाथ धरते हुए कहा, "हाय इस स्वार्थीपन को धिक्कार! सौ नहीं पर कोड़ बार धिक्कार!! अपना पेट तो पशु-पक्षी भी भरते हैं इसमें मानव जीवन की क्या विशेषता है ? आज जगह जगह अपने लोगों का बिना विद्या के अपमान होता है। धन का आनन्द भी नहीं उठाया जाता। आवश्यका है कि सारे देशवासी विद्या पढ़कर अपनी वास्तविक

में दशा जाने । अंधश्रद्धा को त्यागें । सब सुखी और निरोग रहकर अपना हितसाधन करने में तत्पर हों । वास्तव में तुम्हारा नाम किसीने ठीक सोच समझ कर अबोधचन्द्र सार्थक रक्खा है । तुम अव्वल दर्जे के स्वार्थी और तुच्छ विचार के व्यक्ति हो ।"

विद्यानंद के उच्च विचार कार्यरूप में परिणत होने लगे। बात की बात में विद्या भवन बनवाया गया । विद्यानंदने शिक्षा के पवित्र उद्देश को सामने रखकर व्यवस्थित कार्यक्रम तैयार कर जनता में विस्तृत विवरण वितीर्ण किया । विद्यानंद की आदर्श योजना सब को पसंद आ गई । शिक्षकों का चुनाव बड़ी योग्यता से किया गया । शिक्षा के पाठ्यक्रम में सेवा के उज्जवल उद्देश को प्रमुख रक्खा । इस संस्था का एक उद्देश यह भी था कि छात्र को सदाचार के साँचे में ढालना । मानसिक तथा शारीरिक

दोनों प्रकार की शिक्षा की पूर्ण व्यवस्था सोची गई। निश्चित दिन को पाठशाला खुली, एक सप्ताह प्रथम ही प्रवेश पत्रों का ढेर एकत्रित होने लगा। योजना की शक्ति के अनुसार १०० छात्रों का ही चुनाव किया गया। विद्यालय का नाम " वीर विद्यापीठ " रक्खा गया। पाठशाला की पढ़ाई के अतिरिक्त छात्रों के भोजन वस्त्र और रहने आदि का भी उचित प्रबंध था। इस विद्यापीठने प्रत्येक छात्र की शक्तियों को विकसित करनेका भी पूर्ण प्रबंध किया। जिस छात्र की जिस विषय की ओर स्वाभाविक रुचि थी उसे उसी विषय में विशेषज्ञ बनाने का ध्येय रखकर पाठ्यक्रम की योजना की गई। व्यवहारिक तथा औद्योगिक कार्य को भी उचित स्थान दिया गया। यह विद्यापीठ अपने आदर्श कार्य से थोड़े ही दिनों में खूब

प्रख्यात हो गया। और समय समय पर सहायता मिलने पर नये नये विभाग भी इस संस्था में खोले गये। श्रीपुरनगर के तो घर घरमें इस की शुभ चर्चा होने लगी।

उसी नगर के एक महल्ले में धनपति नामक एक धनाढ्य सेठ रहता था। उसकी स्त्री का नाम कमला था। सेठजी के कोई सन्तान नहीं थी। इस कारण वे सदा उदास रहते थे। वृद्ध आयु में उनके घर एक पुत्र का जन्म हुआ। उनके मन की अभिलाषा चिरकाल से पूरी हुई। सेठजी ने बड़ा भारी उत्सव किया। नव जात शिशु का नाम 'गुमानचन्द्र' रक्खा गया। अपने पुत्र को बालक्रीडा करते देख सेठ जी फूले नहीं समाते थे। उसकी तुतली वानी उनको कर्णप्रिय लगती थी। उनको अपने पुत्र पर असीम प्रेम था। गुमानचन्द्र जो

चीज माँगता वह उसे मिल जाती थी। जो काम वह करना चाहता, कर डालता था चाहे वह उचित हो अथवा अनुचित। सेठजी अपने पुत्र के अनुचित कामों की ओर आँख उठाकर भी नहीं देखते थे। गुमानचंद्र नोकरों के हाथ की कठपुतली बन गया। नौकर भी सेठजी की इस प्रवृत्ति का अनुचित उपयोग करने लगे। गुमानचंद्र के संस्कार बिगड़ने लगे। सेठजी को गुमानचन्द्र के चरित्र पर तनिक भी ध्यान नहीं था कारण वह पुत्र प्रेममें बेभान बन गये थे।

गुमानचन्द्र कुछ बड़ा हुआ। सेठजीने उसकी सगाई भी कर डाली और इसी वृद्ध आयु में पोता देखने की मन ही मन मनौती मनाने लगे। गुमानचन्द्र का स्वभाव कुत्सित था। वह उच्छृङ्खल बन गया। अपनी मनमानी करने पर भी गुमानचन्द्र किसी प्रकारका उपा-

लम्भ नहीं पाता था। सेठजी और उनकी स्त्री की तो यही इच्छा थी कि गुमान घर ही पर रहे पर लोगोंने बरजोरी गुमान को 'वीर विद्यापीठ' में भर्ती करा दिया। उनके पड़ोसी नवयुवक गुमान की बुरी आदतों से खूब परिचित थे और ये जानते थे कि यदि यह गुमानचन्द्र घर रहेगा तो स्वय बिगड़ेगा और हमारे छोटे भाइयों को भी बिगाड़ेगा।

गुमानचन्द्र 'विद्यापीठ' में प्रविष्ट हुआ पर वहाँ उसके दुराचारी साथी तथा नौकर नहीं थे। फिर भी विद्यापीठ के नियमों के कारण वह घर नहीं जा सकता था। गुमानचन्द्र को यहाँ कुछ काम अपने हाथों भी करना पड़ता था जिसको कि वह करना हल्का काम समझता था। वह चाहता था कि मेरा काम कोई दूसरा छात्र कर दे तो ठीक। गुमान के

कमरे के दाहिनी ओर एक दूसरे छात्र का कमरा था। उस का नाम विज्ञानचंद्र था। विज्ञानचंद्र के माता पिता का देहान्त हो चुका था। थोड़े दिन तो वह अपने मामा के पास रहा। बाद में जब इस 'विद्यापीठ' की व्यवस्था अच्छी देखी तो उसका मामा उसे यहाँ भर्ती करा गया।

विज्ञानचन्द्र विनयी था। वह प्रातःकाल प्रार्थनार्थ मन्दिर में जाते समय गुमानचंद्र को भी उठा कर नित्य लेजाया करता था। क्योंकि गुमानचंद्र आलसी था, बहुत देर तक सोना चाहता था और उसे तिरस्कार तथा फटकार आदि का भी डर नहीं था। गुमानचंद्र यदि विज्ञानचंद्र को कुछ बुरा भला भी कह देता था पर सुशील विज्ञानचन्द्र उन तुच्छ गालियों पर तनक भी ध्यान नहीं देता था। विज्ञानचन्द्र को

फिक्र था कि मेरा पड़ौसी गुमानचन्द्र किसी तरह सुधर जाय।

इधर तो विज्ञानचन्द्र का यह उज्ज्वल उद्देश था कि मेरा सहपाठी सुमार्गपर आ जावे उधर गुमान मन ही मन ऐंठता था कि मैं धनवान का पुत्र हूँ इसीलिये यह मेरी इतनी सहायता करता है। इसी कारण को छिपाने के लिये यह विज्ञानचन्द्र मुझे लम्बे लम्बे उपदेश बार बार दिया करता है। पर बात कुच्छ दूसरी ही थी। विज्ञानचन्द्र कभी भी ऐसी तुच्छ भावना नहीं रखता था। विज्ञानचंद्रने अपने साथी से प्रार्थना की कि तू अपना ध्यान पढ़ने में लगा। विद्या पढ़ने का यही समय है। यदि इस आयु को लड़ने झगड़ने, खेलने और कूदने ही में बितादेगा तो तू शेष आयु में दुख पायगा और पछता-

यगा। फिर पछताने से कुछ नहीं होगा। तू अपनी लक्ष्मी का इतना गर्व मत कर, लक्ष्मी तो विद्या की दासी है। देख गुमान! पराये आसरे मत रहे। अपना काम खुद किया कर लक्ष्मी के भरोसे अपने अमूल्य मानव जीवन को धूल में मत मिला, इस लक्ष्मी का क्या विश्वास? यह चञ्चल है, जो आज है और कल नहीं।

गुमानचन्द्र,—" यदि मेरे पास धन होगा तो सब मेरी गरज करेंगे। डर क्या है। मैं अपने पास कई पढ़े लिखों को नौकर रख लूंगा। मुझे इस विद्या पढ़ने का श्रम क्यों करना चाहिये? क्या तुझे मालूम नहीं है कि आज अनेक पढ़े लिखे नौकरी के लिये जूतियों चटखाते फिरते हैं। विज्ञानचद्र! तुम व्यर्थ इतनी सरपची क्यों करते हो। भाई पढ़ने में क्या धरा है! क्या तुमने यह नहीं सुना है कि—

विद्या वृद्धास्तपोवृद्धा ।
ये च वृद्धा बहुश्रुताः ॥
सर्वे ते धनवृद्धस्य ।
द्वारि तिष्ठन्ति किङ्कराः ॥ १ ॥

मित्र! कितनी ही विद्या पढ़ी हो, कितना ही तप किया हो, कितना ही कोई बहुश्रुति विद्वान हो, पर इन सब को धनवान के द्वार पर तो अवश्य आना ही पड़ता है।"

विज्ञानचन्द्र,—"भाई! तू भूल करता है धन कमाने का तरीका विद्या से ही मालूम होता है। नौकर तुम्हे कमाकर धन देंगे इस बात पर मत इतराना। ख्याल रखना वे तेरे धन को उल्टा उड़ा देंगे और तुम्हे दाने दाने का भिखारी बना देंगे। मेरी बात मानले और अपना मन विद्या पढ़ने में लगा। अभिमान को त्याग दे। लड़ाई और झगड़े आदि में

अपना अमूल्य बाल जीवन न व्यतीत कर कुछ तो सीख। मैं तुझे चेता देता हूँ कि यदि तुझे अपने पिता के धन की रक्षा करनी है तो मेरी बात मान ले और विद्या पढ़ने से जी मत चुरा। पढ़ने से तूही सुख पायगा।

गुमानचन्द्र,—" मुझे इतना तंग क्यों करते हो ? क्या मुझे अधिक पढ़ लिखकर साधु थोड़े ही बनना है। या हमें नौकरी तो करनी ही नहीं है मुझे इन पुस्तकों के ज्ञान से क्या सरोकार। मैं तो कुछ हिसाब सीख लूगा। हुंडी पर दस्तखत कर अपना काम निकाल लूगा व्यर्थ की यह मगजमारी करनेवाला मूर्ख मैं नहीं हूँ। तू तो विद्या बावला हो गया है तुझे यह मालुम कहाँसे हो कि यह बाल वय खेलने, कूदने तथा मौज करने को है। खूब खाना पीना और नींद लेना, इसके बराबर

दूसरा क्या सुख है ? पर तू तो पूरा वैरागी हो गया है। यार कभी दोस्तों से गप–सप्प भी नहीं लड़ाता। न हँसी दिल्लगी ही किया करता है। छोड़ पढ़ना, फेंक उस पुस्तक को और चल मेरे साथ। आज मैं तुझे एकान्त में ले चलता हूँ। कुछ गुप्त मजे की बातें बताऊंगा। छिपकर तारा खेलेंगे। बीड़ी पीवेंगे। गधामस्ती करेंगे। फिर पढ़ना तो सारी उम्र है ही। "

विज्ञानचंद्र,—" मुझे उपदेश देकर तुझे ठगने का काम तो करना है ही नहीं। हित की बात तो बुरी लगेगी ही। केवल हिसाब किताब पढ़ लेना क्या काफी है ? क्या तुझे मालूम नहीं है कि बिना विद्या के हकूमत का एक छोटा से छोटा सिपाही भी धनाढ्य व्यक्ति को कितना तंग किया करता है ? बिना विद्या जगह २ अपना अपमान होता है। क्या अपठित लोग

का रक्षण कर सकता है ? क्या मनुष्य जीवन केवल भोजन करने को है ? गुमानचंद्र ! तू सरासर भूल करता है। पेट तो पशु पक्षी भी भरते हैं ? क्या नींद लेने और छुप कर बुरे काम करने में भलाई है ? क्या तुम विद्यापीठ में यह बुरी रीतियाँ चला सकते हो ? किसी घमंड में मत रहना। धनवान हो तो अपने घर के हो। दूसरों को बिगाड़ने को नहीं। बीड़ी पीने और ताश खेलने में शरीर और समय की बरबादी के सिवाय धरा क्या है। समय और धन की बरबादी के सिवाय इस बुरे काम का क्या नतीजा हो सकता है ? पढ़ना सारी ऊमर नहीं, परन्तु बालपन ही में अच्छी तरह से होता है। मित्र ! जो विद्या इस अवस्था में आसानी से सीखी जायगी वह जवानी में सीखना कठिन तथा बुढ़ापे में

सीखना असम्भव है। तुम कुलीन घराने के हो कर दुराचारी बनना चाहते हो यह कितना दुःख। असल में यह दोष तुम्हारा नहीं पर तुम्हारे मा बापों का है। तुम धनवान के पुत्र और सो भी इकलौते बेटे हो फिर तुम्हारे बिगड़ने की सम्भावना क्यों नहीं हो ? यह तो तुम अपना सौभाग्य समझो कि इस आदर्श विद्यापीठ में दाखिल हो गये अन्यथा तुम्हारी सब आयु इसी प्रकार के दुराचार में बीत जाती। भाई! मुझे तुम्हारे पर वास्तव में दया आती है। विचार करो और पढ़ने में जी लगाओ! भले ही तन की अपेक्षा से तुम सब विद्यार्थियों से आगे हो पर सदाचार में तो सब के पीछे ही हो। मैं नहीं चाहता कि मेरा सहपाठी और पड़ौस के कमरे में रहनेवाला एक मेरे ` `देखते विद्या से वंचित रह

गुणानचन्द्र–" ऐसे सज्जन तुम्हीं हो या और कोई दूसरा भी। यह सब कहने की बातें हैं। दुनियाँ का काम योंहीं चलता है। तुम अधिक पढ़ोगे तो पागल या बिमार हो जाओगे। कुछ सैर सपाटा भी किया करो। चलो मेरे साथ "

विज्ञानचन्द्र–" यह बात थोड़े ही है कि मैं रात दिन किताब का कीड़ा बना हुआ हूँ। मैं दौड़ में भी तुम से तेज हूँ। व्यायाम के समय कुश्ती लड़कर देख लेना कौन जीतता है ? मैं समय पाकर उद्योग में भी लगा रहता हूँ। मैं तुमसे शारीरिक गठन में किसी भी प्रकार कमजोर नहीं हूँ। दुर्बल हो तो तुम हो क्योंकि तुम सदा गंदे विचार करते हो। शारीरिक श्रम भी नहीं करते। मित्र ! पढ़ना हर हालत में फायदेमंद है। क्या तुमने एक

बात नहीं सुनी ? अगर न सुनी हो तो ध्यान लगा कर सुनलो, मैं तुम्हें अभी सुनाता हूँ। यह कहानी मैंने पुस्तकालय में आकर पढ़ी है। तुम तो कभी उधर जाते तक नहीं। बहुत अच्छी अच्छी कहानियों की किताबें इस विद्यापीठ के लिए एक सद्गृहस्थने भेजी हैं। तुम परसों रात को एक विद्यार्थी को गंदी कहानी सुना रहे थे। उनके बदले ऐसी कहानियाँ सुनाया करो तो कैसे भले संस्कार पड़ जाया करें:—

द्रव्य से विद्या की महत्ता ।

एक नगर में दो सेठ रहते थे। वे आपस में बड़े मित्र थे। एक धनवान तो दूसरा विद्वान था। उन दोनों में प्रत्येक अपने को बड़ा बताता था। एक धन और दूसरा विद्या को अपनी बड़ाई का कारण समझता था। झगड़ा इतना बढ़ा कि एक, दूसरे को सब प्रकार से नीचा दिखाने का प्रयत्न करने लगा।

अन्त में दोनों ने निश्चय किया कि इस प्रकार आपस मे अपने मुँह मिट्ठु बनना न्याय संगत नहीं है। चलो किसी तीसरे निष्पक्ष पुरुष के पास और इस बात का निपटारा करवा लें कि वास्तव में दोनों में कौन बड़ा है। वे दोनों अपने नगर के राजा के पास गये और अपने २ हाल सुनाये। राजा भी असमंजस में पड़

गया कि मैं दोनों में से किस को बड़ा बताऊँ । जिसको मैं छोटा बताऊँगा वह मेरे नगर को छोड़ जायगा अतएव उचित यही है कि किसी प्रकार इनसे अपना पीछा छुड़ाऊँ ।

राजाने कहा इस छोटी सी बात के लिये मेरे पास आने की क्या आवश्यता थी ? तुम दोनों मेरे मंत्रीके पास जाओ वह तुम्हारा झगड़ा निबटा देगा । दोनों इस समस्या को सुलझाने के लिये प्रधान यानि मंत्रीके पास गये। उस चतुर मंत्रीने सोचा कि दोनो पर एक एक आफत डाल दूँ । जो बच जायगा वह बड़ा होगा । पर यह बात उसने गुप्त रक्खी । दोनों को एक एक पत्र बंद करके कहा कि अमुक देश के राजा के पास जाकर यह चिठ्ठी देकर आओ, वहाँ से वापस लौटने पर मैं तुम्हारे झगड़ेको शीघ्र निबटा दूँगा ।

दोनों पत्र लेकर चले। कई दिनों तक मार्ग की कठिनाइयों को सहते सहते उस देश की राजधानी में पहुँच कर बगीचे में ठहरे धनवान सेठने विचार किया कि पत्र लेकर पहले मैं पहुँच जाऊँगा तो अधिक सत्कार पाऊँगा। इस कारण से वह विद्वान को बगीचे में ठहरा कर राजा के दरबार में गया। राजाने पूछा, कहो सेठजी कैसे आना हुआ। धनवान ने कहा मैं एक पत्र आपके नाम लाया हूँ। इसे खोल कर पढ़ लीजिए। राजाने मन्त्री से कहा कि पत्र शीघ्र पढ़ो और तदनुसार शीघ्र काम करो।

मन्त्रीने पत्र पढ़ा तो उसके आश्चर्य की सीमा न रही। उसने सेवकों को आज्ञा दी कि तलवार लाओ और इस धनी सेठ की गरदन उड़ा दो। धनवान यह वाक्य सुनकर

वह खूब गिड़गिड़ाया। कातर स्वरसे उसने प्रार्थना की कि किसी प्रकार आप मुझे न मारिए। मैं आप कहो जितना धन देने को तैयार हूँ। रही बात उस देश के राजा की, सो तो मैं वहाँ जाकर समझ लुगा। राजा भी पाच लक्ष का द्रव्य देख ललचाया और कहने लगा, "मंत्रीजी! इसके व्यर्थ प्राण लेनेसे क्या प्रयोजन? यह तो भला आदमी जान पड़ता है।"

मंत्रीसे छुट्टी लेकर धनवान शीघ्रता से बगीचे में आकर विद्वान से बोला कि तुम भी राजा के पास जाकर पत्र दे दो। सेठजी के दिलमें था कि मैं तो धन से बच गया पर यह निर्धन केवल विद्या से कैसे बचेगा? विद्वान भी निर्भीकतापूर्वक राजसभा में जाकर उपस्थित हुआ। विद्वानने अपना पत्र राजा को दे दिया। राजाने कहा "मंत्री! इस पत्र

को भी खोलो और मालूम करो कि क्या समाचार है ?" मन्त्रीने पत्र खोलकर पढ़ा तो उसमें भी लिखा हुआ पाया कि इस पत्र के लानेवाले को तलवार से मार डालो। मन्त्रीने नौकरों को आज्ञा दी कि एक तलवार लाओ और इस पुरुष का सिर शीघ्रता से उड़ा दो।

यह बात सुनकर विद्वान बिल्कुल नहीं घबड़ाया। वह कहने लगा कि तलवार शीघ्र मंगवाओ और मुझे मार डालो। मन्त्रीने इस विद्वान की आतुरता देखकर विचार किया कि इस घटना में कुछ रहस्य अवश्य है। पुन उसने सोचा कि कुछ दाल मे काला मालूम होता है। मन्त्रीने पूछा। कहो भाई, मरने को इतनी उतावल क्यों करते हो ! क्या तुम्हें मरना अच्छा लगता है ? क्या कारण है कि तुम

मृत्यु के मुख में जाने को इतने तत्पर हो ? इस बात में क्या रहस्य है ?

विद्वानने कहा, " सचमुच इस बात में जरूर रहस्य है। क्या आप को यह भी पता नहीं पड़ता कि मुझे यहाँ मरने के लिये क्यों भेजा है ? आप राजनीति विशारद हो, क्या ऐसी साधारण बातों का भेद भी नहीं समझ पाते ! मुझे यहाँ भेजने के कई कारण हो सकते हैं। याती हमारे देश में हमें मारने को एक भी तलवार नहीं है या कोइ मारनेवाला नहीं है या हम वहाँ शेर हैं जो मारे नहीं जा सके हैं। इस के सिवाय और क्या कारण हो सकता है ? आप ही स्वय सोच लीजिये। "

यह बातें सुनकर मंत्री घबराया और सोचने लगा कि यह बात क्या है कुछ समझ

में नहीं आता काँहीं ही धोखा तो न दो । मंत्रीने विद्वान से कहा कि मेरी समझ में कुछ बात नहीं आई । आप ही कृपाकर सब कारण कह दीजिये । विद्वानने कहा । सुनिये, आप को यह तो सोचना चाहिये था कि हमारा राजा बिना मतलब के क्यों हमारी जान इस प्रकार जोखों में डालेगा ? असल में कारण यह है कि हमारा राजा आप के देश से कई अर्सों से द्वेष रखता है और वह इस फिक्र में है कि किसी न किसी प्रकार पुराणा बदला वसुल करूं अर्थात् आप का देश उसके अधिकार में हो जाय । लड़कर आप को हराना तो उसकी शक्ति से परे है । एक निमित्तियेने हमारे राजा को गुप्त से यह तरकीब बतलाई है कि हम दोनों को यहाँ भेज कर मरवा डाले । क्योंकि हमारे शरीर में से रक्त की एक बुंद गिरते ही यहाँ भीषण अग्नि

प्रकट होगी और २४ मील तक सब पदार्थ भस्मीभूत हो जायेंगे। राजभक्ति के लीए हम प्राणों की परवाह नहीं करते हुए यहाँ आये हैं।

मंत्रीने कहा, "तुम्हारा भला हो जो हमें इस संकट से बचाया। जाओ, तुम जीवित रहो।" विद्वानने कहा कि ऐसा नहीं होगा। हमें यहाँ भेजनेमें राजाने ५ लाख रुपैये खर्च किये हैं। यदि हम जीवित चले जाय तो हम को पांच लक्ष रुपया देना पड़ता है और इसमें राजा को या हमको क्या लाभ ? मंत्रीने कहा आप हम से ५ लाख रुपये के बदले दश लक्ष ले लीजिये और यहाँ से प्रस्थान कीजिये हम आप का यह उपकार कदापि नहीं भूलेंगे।

इधर बगीचे में बैठा हुआ धनवान पुरुष विचार कर रहा था कि अब विद्वान तो जरूर मारा जायगा। उस की विद्या कुछ काम नहीं आयगी। वाहरे! धन, तुझे वास्तव में धन्यवाद

है जो मेरे प्राण बचाये। धनवान इस प्रकार की बातें सोच ही रहा था कि उसने विद्वान को सकुशल लौटते हुए देखा। विद्वानने कहा जो धन संकट के समय तुम से चला गया था वही डबल धन मुझे मेरी विद्वत्ता के प्रताप से मिल गया है। विद्या का प्रत्यक्ष चमत्कार देखलो। ज़रा सोचो तो सही ऐसा खतरनाक पथ से बचनेवाला विद्वान आज लक्ष्मी का पति बन गया है। वास्तव में विद्या के पीछे लक्ष्मी फिरती है। उन्होंने नगर में लौटकर सब हाल नृपति को सुनाया। राजाने भी विद्वान को खूब धन दिया। विद्वान अनाथों और निर्धनों के पढ़ाने में अपनी सारी सम्पति लगाकर दुनियाँभर में प्रसिद्ध हुआ।

गुमानचंद्र—" विद्यानचन्द्र, वास्तव मे मुझे पता नहीं था कि इस प्रकार लक्ष्मी विद्या

से ही प्राप्त होती है तथा विद्या ही से रक्षित रहती है। मेरे चापलूस मित्रोंने मुझे ठगने के लिये उल्टी बातें बताईं। अब से मैं पढ़ने में ध्यान लगाया करूँगा।"

विज्ञानचद्र—"यह कारण है कि उपदेश की बातें बहुधा खारी लगती हैं। यदि तुम्हारा इन बातों से कुछ जी दुखा हो तो मैं क्षमा मागता हूं"

गुमानचद्र—"नहीं भाई! तुमने मेरेपर असीम उपकार किया। मैं अपने कुकर्मों के कारण अब पछताता हूँ। मेरा दुर्भाग्य था कि मैं ऐसे ऐसे उपकारी मित्रों के पास तक नहीं फटकता था।"

गुमानचन्द्र वैसे तो धनवान का पुत्र होनेके कारण बहुधा कुसस्कार वालों के सम्पर्क

में रहता ही था पर उसकी मा का उस पर बहुत प्रेम था। यदि गुमानचंद्र को विज्ञानचंद्र के पास अधिक रहने का अवसर मिल जाता तो वह अवश्य सुधर जाता। पर होना कुछ और ही था। गुमानचन्द्र की मा चाहती थी कि किसी प्रकार मेरा पुत्र मेरे पास ही रहे। वह उसे विद्यापीठ से बुला लेती थी और बिना कारण भी घरपर रख लेती थी। विद्यापीठ को धोखा देने के लिये कई बार सेठजी डाक्टरों का झूठा सार्टिफिकेट पेश कर देते थे।

सेठजी धनवान होने के कारण विद्यापीठ के संचालकों पर रौब गांठना चाहते थे और सदा यही प्रयत्न करते थे कि शिक्षक गण आदि गुमानचंद्र के साथ रियायत किया करें। शिक्षकों को भी ललचाने का प्रयत्न किया जाता था। विद्यापीठ के नौकरों को भी गुप-

धुप इस बात के लिये रुपये दिये जाते थे कि गुमानचद्र को किसी प्रकार का कष्ट न हो।

घर पर कई महीने रहकर परीक्षा में सम्मिलित होने की गरज से गुमानचन्द्र विद्यापीठ आने लगा। पर नतीजा वही हुआ जो होना चाहिये था। विज्ञानचन्द्र तो सब विषयों में प्रथम रहा तथा गुमानचंद्र प्रत्येक विषय में अनुत्तीर्ण हुआ। गुमानचद्र अब पछताने लगा पर 'फिर पछताए क्या हुए जब चिड़िया चुग गई खेत'।

गुमानचन्द्रने सोचा कि मेरे देखते देखते विज्ञानचद्र सर्व बातो में दक्ष हो रहा है तो मैं भी अब प्रयत्न करूँगा। विज्ञानचन्द्र की प्रेरणा से दूसरे साल में ६ महीने तक तो गुमान चन्द्रने मन लगा कर अध्ययन किया। पर वह परीक्षा का फार्म न भर सका। कारण

यह था कि परीक्षा जिस दिन होने वाली थी उसी दिन गुमानचन्द्र का विवाह होने वाला था। यद्यपि गुमानचद्र की आयु विवाह करने योग्य नहीं थी किन्तु उस की ससुराल वाले विवाह करने पर उतारू थे। वे कहते थे कि पढना तो वार वार होता ही है। ब्याह बार बार थोड़े ही होता है वास्ते विवाह के कइ दिन पूर्व ही गुमान की पढाई छुट गई थी और चित्त लग्न की ओर झुक गया था। विज्ञानचन्द्रने गुमानचन्द्र को समझाया कि तुम इस समय विवाह करने से इनकार कर दो पर गुमानचद्र की इतनी हिम्मत नहीं हुई। वह विद्यापीठ छोड कर घर चला गया और फिर चडाल चौकडी के फँदे में फँस गया।

गुमानचद्र को आकाश टोपसी सा नजर आने लगा। विवाह की रगरलियाँने उस

का ध्यान पढ़ाई से दूर कर दिया। रात दिन दुराचार के वातावरण में रहने के कारण विद्यापीठ का प्रभाव भी जाता रहा। विवाह होने के बाद सेठजीने कहा अब पढ़ कर क्या करेगा? घर का काम भी बहुत है। गुमानचंद्र अपनी पढ़ाई की पुस्तकों को एक ताक में रख कर तारा और चौपड़ खेलने में लग गया तथा कभी कभी अपने मित्रों से प्राप्त हुए गंदे उपन्यास पढ़ने लगा। ऐसी पुस्तकें, जिन को हाथ में लेना भी पाप है, गुमानचन्द्र के चारों ओर दिखाई देने लगी। किस्सा तोता मैना, साढे तीन यार, और कोकशास्त्रने गुमानचद्र को मिट्टी में मिला दिया। विज्ञानचन्द्र को भी ऐसे नालायक का साथ छोड़ना पड़ा। विज्ञानचंद्र को गुमानचन्द्र से नहीं किन्तु गुमानचद्र के कुकर्मों से घृणा थी।

गुमानचंद्र के पास अब विज्ञानचंद्र नहीं आ सकता था कारण कि उसे अब पढ़ाई के लिये अधिक समय देना पड़ता था। निरन्तर उत्तीर्ण होने से ईधर विज्ञानचन्द्र का उत्साह दूना बढ़ता था। और उधर गुमानचन्द्र अधिक दुराचारी बन गया। कहाँ रात और कहाँ दिन! विज्ञानचंद्र की प्रशंसा सुन कर गुमानचंद्रने विद्यापीठ में फिर आना चाहा पर उस का नाम कट चुका था तथा ऐसे दुराचारी छात्रों का पुनः प्रवेश होना इस विद्यापीठ के नियमों से प्रतिकूल था। इस समय गुमानचंद्र की आयु तो केवल १३ वर्ष की ही थी पर उस के मुख पर लाली की अपेक्षा पीलापन अधिक था। आंखो गड्ढे में धूँसी हुई, गाल पिच के तथा बाहु तिनकों से थे। वह इतना कमजोर हो गया था कि तनिक भी परिश्रम

करने में उसे चक्कर आते थे। साँस फूल जाता था। खाया हुआ भोजन गरिष्ट होने के कारण पचता नहीं था। इस प्रारम्भिक आयु में वह जर्जर हो गया था। प्रायः धनवानों के पुत्र ऐसे ही हुए करते हैं। बात बात में चिढ़ जाने का उस का स्वभाव हो गया। गुमानचन्द्र अखबारों के गंदे और झूठे विज्ञापन पढ पढ कर उत्तेजक दवाएँ मंगा कर बल प्राप्त करना चाहता था। ठगों की भी बन पड़ी। ऊँट वैद्योंने उसे नशे की चीजें खिला खिला कर बिल्कुल कमजोर बना दिया। गन्दे विचार और व्यभिचारियों का यह ही हाल हुआ करता है।

गुमानचन्द्र के शरीर में गुप्त रोगोंने भी निवास किया। पीड़ा के कारण उस की नींद भी हराम हो गई। इधर उस के माता पिता

का भी देहान्त हो गया। घर का सारा भार गुमानचंद्र पर आ पड़ा। उस की आयु इस समय १८ वर्ष की थी। इस की स्त्री जो खानदान घराने की पढ़ी लिखी थी उसे समझाने का प्रयत्न करती थी पर यह तो उल्टा उसे धमकाता तथा पीटता था। बिचारी बड़े दुख में पड़ी हुई स्त्री अपने जीवन को बड़े क्लेश में बिता रही थी। अपठित और बुरे संस्कारी लड़कों को कन्या देने का यह ही तो नतीजा हुआ करता है।

गुमानचन्द्र का धन भी धूल में मिलने लगा। दुकान के मुनिमोंने भी अपना अपना घर बनाना शरू किया। गुमानचंद्र को व्यभिचारियों की संगत में रह कर गली गली में मारा मारा फिरना पड़ता था। गुमानचंद्र की आवश्यकतायें खूब बढ़ी। यार लोगों

ने भी अपना उल्लू सीधा किया। कभी कभी दुकान पर जाकर गुमानचंद्र देख आता था। मुनिमोंने लोगों का रुपया जमा करना शुरु कर दिया। दुकान की सजावट में वृद्धि कर लोगों को धोखा दे कर गुमानचंद्र को पूरा कर्जदार बनाना शुरु कर दिया।

उधर विज्ञानचंद्र बी. ए. की परीक्षा में उत्तीर्ण हुआ। वह अपने प्रान्तभर में अव्वल रहा अतएव युनिवर्सीटी की ओर से उसे सुवर्णपदक भी मिला। विज्ञानचंद्रने दो वर्ष कानून की पढाइ कर एल. एल. बी की डिग्री भी प्राप्त की। नगर के राजाने विज्ञानचंद्र की विचक्षण बुद्धि देख कर उसे न्यायाधीश के पद पर आरोहित किया। इस पद पर पहुँच कर विज्ञानचंद्रने जज की हैसियत से नीतिपूर्वक द्रव्य उपार्जन किया। विज्ञानचंद्र कई सभाओं का

सभापति एवं कई संस्थाओं का संरक्षक था। ' वीर विद्यापीठ ' के लिये स्थाई फण्ड की योजना कर के विज्ञानचन्द्रने अपनी कृतज्ञता प्रकट की। उसने नगर में बालाश्रम की योजना करके स्त्री शिक्षा के प्रचार में भी खूब उद्योग किया। इस समय विज्ञानचंद्रकी आयु २३ वर्ष की थी। जगह जगह से विवाह के संदेशे आने लगे। विज्ञानचंद्रने कहा कि मैं पूरे २९ वर्ष तक ब्रह्मचर्य का असंड पालन करूँगा और उसने ऐसा किया भी।

२९ वर्ष की आयु में विज्ञानचन्द्रने एक १६ वर्ष की सुशील एवं विदूषी कन्यासे विवाह किया। उसने स्त्रीशिक्षा का प्रचार कार्य अपनी स्त्रीको सुपर्द किया तथा आप अपने निष्पक्ष न्याय के कारण नगर के मंत्री पद पर आरूढ हुआ।

उधर गुमानचद्र की दशा दिन व दिन बुरी होने लगी। वह जूआ खेलने के कारण सर्व दुर्गुण सम्पन्न हो गया। दुकान का कार्य भी बिगड़ा। लेनदारों ने रुपयों की माँग की। गुमानचन्द्र समय पर रकम नहीं पहुँचा सका। दुकान के नौकर ताला देकर चल पडे। गुमान चद्र पर प्रधान न्यायालय में दावे दायर हुए। यह मुकदमा भी दीवान विज्ञानचन्द्र के पास गया।

गुमानचद्र की आखें खुलीं। उसे पत्ता पडा कि विज्ञानचद्र की बातों पर नहीं चलने के कारण आज मैं कैसी दयामय दशा में हो गया हूँ। विज्ञानचंद्र मत्री के समक्ष गुमानचद्र उपस्थित हुआ विज्ञानचद्र इतने ऊँचे पद पर पहुँच कर भी अपने पुराने सहपाठी गुमानचद्र को नहीं भूला। उसने सब मुकदमा ध्यान से पढा तथा मुनिमो की गारस्तानी को जान कर

उनके घरोंकी तलाशियां लेना आरम्भ किया। इन तलाशियां में गुमानचंद्र के पिता की बहु मूल्य सामग्री प्राप्त हुई।

विज्ञानचंद्रने एक कमेटी बिठाकर गुमानचंद्र की दुकान का पिछले कई वर्षों के हीसाव की जांच कराई। जांच में मुनिमों की पोल खुल गई। गुमानचन्द्र को इतनी रकम मिल गई कि उसने अपने देनदारों का तमाम पैसा चुका दिया। विज्ञानचंद्र की सलाह लेकर उसने दूसरा व्यापार आरम्भ किया तथा लोकोपकारी कार्यों में अपनी पत्नि सहित भाग लेने लगा। अन्त में नगर के स्वयं सेवक मंडल के सेनापति के पद पर रहकर गुमानचन्द्रने जनताकी अच्छी सेवा की। साधुवाद है विज्ञानचन्द्रको कि जिसने अपने सहपाठी को सुधार कर एक आदर्श एवं अनुकरणीय जीवन विताया ॥ इति ॥

प्रश्नोत्तर।

प्रश्न–प्यारे विद्यार्थियो क्या तुमने यह सवाद ध्यान लगा के पढ़ लिया ?

उत्तर–जी हाँ

प्रश्न–बतलाओ तुमने इस सवादसे क्या मतलब गृहन किया ?

उत्तर–जो मातापिता अपने लड़कों का लाड कर अपठित रख देते हैं या लड़के जी लगा के पढाई नहीं करते है वह कुसगत से दुराचारी बन जाता है और तमाम उम्मर भर के लिये दुःखी हो जाते हैं जैसे गुमानचन्द्र एक खानदान और धनी सेठ का पुत्र होने पर भी वह अपठित रह कर दाने दाने का भीखारी बन गया। साथ में हम यह भी पढ़ चूके है कि विज्ञानचन्द्र

उनके घरोंकी तलाशियां लेना आरम्भ किया। इन तलाशियां में गुमानचंद्र के पिता की बहु मूल्य सामग्री प्राप्त हुई।

विज्ञानचंद्रने एक कमेटी बिठाकर गुमानचंद्र की दुकान का पिछले कई वर्षों के हीसाब की जांच कराई। जांच में मुनिमों की पोल खुल गई। गुमानचन्द्र को इतनी रकम मिल गई कि उसने अपने देनदारों का तमाम पैसा चुका दिया। विज्ञानचंद्र की सलाह लेकर उसने दूसरा व्यापार आरम्भ किया तथा लोकोपकारी कार्यों में अपनी पत्नि सहित भाग लेने लगा। अन्त में नगर के स्वयं सेवक मंडल के सेनापति के पद पर रहकर गुमानचन्द्रने जनताकी अच्छी सेवा की। साधुवाद है विज्ञानचन्द्रको कि जिसने अपने सहपाठी को सुधार कर एक आदर्श एवं अनुकरणीय जीवन बिताया ॥ इति ॥

प्रश्नोत्तर ।

प्रश्न—प्यारे विद्यार्थियो क्या तुमने यह संवाद ध्यान लगा के पढ़ लिया ?

उत्तर—जी हाँ

प्रश्न—बतलाओ तुमने इस संवादसे क्या मतलब गृहन किया ?

उत्तर—जो मातापिता अपने लड़कों का लाड़ कर अपठित रख देते हैं या लड़के जी लगा के पढ़ाई नहीं करते हैं वह कुसंगत से दुराचारी बन जाता है और तमाम उम्मर भर के लिये दुःखी हो जाते हैं जैसे गुमानचन्द्र एक खानदान और धनी सेठ का पुत्र होने पर भी वह अपठित रह कर दाने दाने का भीखारी बन गया। साथ में हम यह भी पढ़ चुके हैं कि विज्ञानचन्द्र

एक साधारण स्थिति का मनुष्य था उन के मातापिता का देहान्त होने के बाद मामा के घरपर रहता था पर वह अच्छी संगत के कारण सदाचरण के वातावरण में रह कर 'वीर विद्यापिठ' में जी लगा कर पढ़ाई करी जिस से क्रमशः वह दीवान पदपर आरुढ हो पुष्कळ द्रव्योपार्जन कर देश-समाज-धर्म और वीर विद्यापिठ को गेहरा फायदा पहुँचाया इतना ही नहीं पर अपने सह पाठी गुमानचंद्र की पतित दशा का भी उद्धार कर उन का जीवन को आदर्श बनाया।

प्रश्न-विद्यार्थियों कहों अब तुम क्या करोगें ? और किस का अनुकरण करोगें।

उत्तर-हम जी लगा के तनतोड़ के पढाई करेगें और विज्ञानचन्द्र का ही अनुकरण करेगें ?

प्रश्न—विद्यार्थियों तुमारे मातापिता मोह के वशीभूत हो १३ वर्षों की आयु में तुमारी सादी करने को उतारु होगा तो तुम क्या करोंगें ?

उत्तर—हरगीज नहीं । हम साफ इन्कार करदेंगे कारण ऐसी बालवय मे सादी कर हम हमारे मानव जीवन या विद्या को मिटि में कदापि नहीं मिलावेगें

प्रश्न—विद्यार्थियों क्या तुमारे मातापिता के सामने ऐसी बात करते तुम को लज्जा नहीं आवेगें ?

उत्तर—इस लज्जाने ही तो हमारा और हमारे देश का सत्यानाश कर डाला है । लज्जा रखने कोंतो दूसरे भी बहुत स्थान है जिस लज्जा से हमारा और हमारे देश का नुकशान होता हो वह लज्जा ही किस काम की । यह लज्जा तो उन को आनी

चाहिये कि अपने १३--१४ वर्षों के बाल कों कि सादी कर उन का जीवन या विद्या नष्ट कर देते हैं। हम तो खुले मैदान में बेधड़क कहदेंगे कि हम इस बाल्यावस्था में सादी करना बिलकूल नहीं चाहाते हैं।

साबास ! विद्यार्थियों साबास !! तुम तुमारी प्रतिज्ञा पर द्रढ़ता पूर्वक डटे राहोगें तो इस कुप्रथा का शीघ्र ही मुह काला हो जायगा। और जो देश के उत्थान की तुम से आशाए कि जाती है वह जल्दी ही सफल हो जायगी। प्यारे विद्यार्थियों तुम अपनी २५ वर्ष की उम्मर तक खूब पढ़ाई करो और ब्रह्मचार्यव्रत पालन करो जिस से तुमारा और तुमारे देश का शीघ्र कल्यान हो यह ही हमारी आशावोद है। शम्।